International Conference on Social Science & Humanities Trends
International Journal for Research Trends in Social Science & Humanities
April 2025
ISSN: 2584-2455

वैश्वीकरण के दौर में हिंदी कविता

डॉ. अजय कुमार
प्रोफेसर-हिंदी
महामाया राजकीय महाविद्यालय, कौशाम्बी (उ.प्र.)
दूरभाष: 9455624397
ई-मेल: **dr.ajaykumarhindi@gmail.com**

"कहाँ गयी वो गाँवों की चौपालें
जिसमें होती थी खट्टी-मीठी बातें
अब तो स्वप्न सा हो गये वो दिन
शेष रह गयीं उन दिनों की यादें।"

शोधसार

वर्तमान समय में वैश्वीकरण का बोलबाला है। यह समय तकनीक का समय है, जिसमें नए-नए प्रयोग प्रत्येक स्तर पर हो रहे हैं। वैश्वीकरण के दौर में हिंदी कविता ने नए अनुभवों, संवेदनाओं और सामाजिक यथार्थ को अभिव्यक्त करने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। वैश्वीकरण ने दुनिया को एक गाँव की तरह जोड़ दिया है, जिससे आर्थिक, सांस्कृतिक और सामाजिक स्तर पर व्यापक परिवर्तन हुए हैं। इन परिवर्तनों का प्रभाव हिंदी कविता पर भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

समकालीन हिंदी कवियों ने वैश्वीकरण के कारण उत्पन्न उपभोक्तावाद, बाजारवाद, सांस्कृतिक संकट, विस्थापन और असमानता जैसे विषयों को अपनी कविताओं में प्रमुखता से उठाया है। आज की हिंदी कविता केवल भावनात्मक अभिव्यक्ति तक सीमित नहीं है, बल्कि वह सामाजिक चेतना और प्रतिरोध का माध्यम भी बन गई है। कवि आम आदमी के जीवन में आए बदलावों, उसकी पीड़ा, संघर्ष और आशाओं को अपनी रचनाओं के माध्यम से व्यक्त करते हैं।

वैश्वीकरण के प्रभाव से भाषा और शैली में भी परिवर्तन देखने को मिलता है। नई पीढ़ी के कवि पारंपरिक प्रतीकों के साथ-साथ आधुनिक जीवन के प्रतीकों–जैसे बाजार, मीडिया, तकनीक, इंटरनेट और महानगरीय जीवन को भी अपनी कविता का हिस्सा बना रहे हैं। इससे हिंदी कविता का दायरा और व्यापक हुआ है। इसके साथ ही वैश्वीकरण ने सांस्कृतिक विविधता के संरक्षण की चुनौती भी पैदा की है। हिंदी कविता इस चुनौती का सामना करते हुए स्थानीयता, लोकजीवन और भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों को भी अभिव्यक्त करती है। इस प्रकार हिंदी कविता वैश्विक और स्थानीय दोनों स्तरों के अनुभवों को समेटने का प्रयास करती है। वैश्वीकरण के दौर में हिंदी कविता ने बदलते समय की जटिलताओं को संवेदनशीलता के साथ व्यक्त किया है। यह कविता

न केवल सामाजिक यथार्थ का दर्पण है, बल्कि मानव मूल्यों और सांस्कृतिक अस्मिता को बचाने का सशक्त माध्यम भी है।

मुख्य शब्द: वैश्वीकरण, हिंदी कविता, बाजारवाद, उपभोक्तावाद, सांस्कृतिक संकट, समकालीनता, लोकजीवन, मनुष्यता।

आलेख: विश्लेषण

साहित्य और समाज का सम्बन्ध आदिकाल से अटूट रहा है। दोनों एक दूसरे के पूरक रहे हैं। इसीलिए साहित्य को समाज का दर्पण माना जाता है। वह समाज को एक राह दिखाता है। समाज में होने वाली प्रत्येक गतिविधियाँ साहित्य में अपनी अहम भूमिका निभाती हैं। प्रत्येक युग की परिस्थितियाँ साहित्य में प्रतिबिंबित होती हैं। वर्तमान समय वैश्वीकरण का है। वैश्वीकरण पूरी दुनिया को अपनी चपेट में लिए हुए है। संचार क्रांति, इंटरनेट, मुक्त बाजार व्यवस्था और बहुराष्ट्रीय कंपनियों के विस्तार ने विश्व को एक वैश्विक गाँव (**Global Village**) में बदल दिया है। आज का गाँव पहले वाला गाँव नहीं है। आज का गाँव तकनीक से दक्ष गाँव है। आज पूरी दुनिया में तकनीक का सहारा लिया जा रहा है। या इसे यह कहें कि तकनीक ने गाँवों और शहरों को आपस में जोड़ रखा है। आज तकनीक आम आदमी की अनिवार्य शर्त सी हो गयी है। समाज में मनुष्यता बनी रहे और मनुष्यता को सबसे ऊपरी पायदान पर रखकर हिंदी कविता का मूल्यांकन किया गया। समय का कालचक्र घूमा और उदारीकरण का युग आया। इस उदारीकरण के आने के साथ-साथ समाज में परिवर्तन की लहर सी आ गई। भारत में 1991 के आर्थिक उदारीकरण, निजीकरण की शुरुआत हुई। धीरे-धीरे करके हम वैश्वीकरण की ओर बढ़ते गये। समय के साथ वैश्वीकरण की प्रक्रिया रफ़्तार पकड़ ली। इसके परिणामस्वरूप आर्थिक विकास के साथ-साथ सामाजिक संरचना, जीवन-शैली और सांस्कृतिक मूल्यों में भी परिवर्तन आया। यह परिवर्तन साहित्य में भी दिखाई पड़ने लगा है। वैश्वीकरण के आ जाने से आम आदमी का जीवन प्रभावित होने लगा। गाँव का आदमी जो बाजार की घातों-प्रतिघातों से अनजान था, वह भी बाजार से बारीकियाँ सीखने लगा। उसका सीखना-सिखाना लाजिमी था। आखिरकार वह अपना जीवनयापन वैश्वीकरण के ताने-बाने में कर रहा था। उसे रोजमर्रा की वस्तुएं बाजार ही उपलब्ध करा रहा है। वैश्वीकरण का अर्थ है विश्व की अर्थव्यवस्था, संस्कृति, राजनीति और संचार प्रणालियों का आपसी जुड़ाव। यह प्रक्रिया देशों के बीच व्यापार, पूँजी, तकनीक और विचारों के आदान-प्रदान को बढ़ाती है। वैश्वीकरण के मुख्य घटक हैं आर्थिक उदारीकरण, मुक्त बाजार व्यवस्था, तकनीकी विकास, संचार क्रांति और सांस्कृतिक आदान-प्रदान। वैश्वीकरण ने जहाँ एक ओर आर्थिक अवसर बढ़ाए हैं, वहीं दूसरी ओर सामाजिक असमानता और सांस्कृतिक संकट जैसी चुनौतियाँ भी उत्पन्न की हैं।

हिंदी कविता के इतिहास को गौर से अवलोकित करें तो पाएंगे कि अपने प्रत्येक युग में हिंदी कविता ने समाज को प्रतिबिंबित किया है और साथ ही साथ वह समय-समय पर आगाह भी करता रहा है। जिससे समाज और

व्यक्ति के सम्बन्धों में एकरूपता बनी रहे। मनुष्य सदैव सामाजिक चेतना से जुड़ा रहा है। भक्ति काल के कवियों ने धार्मिक और सामाजिक प्रश्नों को उठाया। साथ ही बाजार के खतरों के प्रति आगाह किया है। कबीर, सूर, तुलसी, मीरा आदि अनेक संत कवियों ने बाजार की उपस्थिति को रेखांकित किया है। कबीर तो सब की खैर पूछते थे बाजार के बीच खड़े होकर ही, और सबकी खबर भी लेते थे, बिना किसी से डरे–

"कबीरा खड़ा बाजार में, माँगे सबकी खैर।
ना काहू से दोस्ती, ना काहू से बैर।।"

सूरदास के यहाँ गोपिकाओं का दही बेचना बाजार की संस्कृति से परिचित कराता है। आज की बाजार में गलाकाट प्रतियोगिता है। क्रेता-विक्रेता आपस में आवश्यकता से अधिक समझदार हैं। सूरदास की गोपिकाएं तो रोज सवेरे ही ब्रज से मथुरा के बाजार में दूध, दही, माखन और घी बेचने जाया करती थीं। लेकिन बहुत कम समय में वे समझ गयीं कि जीने का सुख आत्मकेंद्रित होकर रहना नहीं है।

"आयो घोष बड़ो व्यापारी।
लादि खेप गुन ज्ञान-जोग की, ब्रज में आय उतारी।।
फाटक दै कर हाटक माँगत, भौरै निपट सुधारि।
धुर ही तें खाटो खायो है, लये फिरत सिर भारी।।"[1]

गोपियाँ यह समझ चुकी थीं कि यह 'बड़ा व्यापारी' (उद्धव) उन्हें अपने जिस प्रोडक्ट की अतिरंजित प्रशंसा करके सम्मोहित करने की कोशिश कर रहा है, वह सिवाय ठगे जाने से अधिक कुछ नहीं है। गोपिकाएं कहती हैं–

"जोग ठगौरी ब्रज न बिकैहे,
यह ब्योपार तुम्हारो ऊधो, ऐसे ही रहि जैहे।"[2]

आधुनिक काल में कवियों ने राष्ट्रीय चेतना, सामाजिक सुधार और मानवीय मूल्यों को अपनी कविता का विषय बनाया। समकालीन हिंदी कविता में सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति और भी अधिक तीव्र हो गई है–

"दुनिया न कचरे का ढेर कि जिस पर
दानों को चुगने चढ़ा हुआ कोई भी कुक्कुट
कोई भी मुर्गा
यदि बाँग दे उठे जोरदार
+++++++----------
बड़े-बड़े नाम कैसे शामिल हो गये इस बैंड दल में!
सब चुप, साहित्यिक चुप और कवितन निर्वाक
चिंतन, शिल्पकार, नर्तक चुप है।
उनके खयान में यह सब गप है

मात्र किंवदंती।
रक्तपायी वर्ग से नाभिनाल-बद्ध ये सब लोग
नपुंसक भोग-शिरा-जालों में उलझे।
प्रश्न की उथली-सी पहचान
राह से अनजान
वाक रुदंती।
चढ़ गया उन पर कहीं कोई निर्दयी,
कहीं आग लग गई, कहीं गोली चल गई।"[3]

आज का कवि समाज के बदलते स्वरूप, आर्थिक विषमता, राजनीति और संस्कृति के संकट को अपनी रचनाओं में व्यक्त करता है। समकालीन हिंदी कविता ने वैश्वीकरण के इस दौर को गहराई से महसूस किया है। **"संवेदनशील मनुष्य को जीने के लिए, दो बातें विशेष रूप से आवश्यक हैं। एक तो यह कि सांसारिक क्षेत्र में उसकी सर्वांगीण सामंजस्यपूर्ण उन्नति होती चली जाये, दूसरे, उसके सम्मुख कोई ऐसा आदर्श हो जिसके लिए वह जी सके या मर सके।"**[4] कवियों ने बाजारवाद, उपभोक्तावाद, बेरोजगारी, विस्थापन, असमानता, सांस्कृतिक संकट और मानवीय संवेदनाओं के क्षरण जैसे विषयों को अपनी कविताओं में अभिव्यक्त किया है। वैश्वीकरण के साथ बाजारवाद का प्रभाव भी तेजी से बढ़ा है। बाजार अब केवल वस्तुओं के आदान-प्रदान का स्थान नहीं रहा, बल्कि वह जीवन-शैली और संस्कृति को भी प्रभावित करने लगा है–

"बेच रहा कोई दिमाग,
सपना बेच रहा है?
श्रम ही नहीं, रक्त तक देखो,
अपना बेच रहा है?
पाप पुण्य के पचड़े छोड़ो,
देह बेचती नारी
गलियों में नहीं में,
राजपथ पर बिकती लाचारी।"[5]

समकालीन हिंदी कवियों ने बाजारवाद की आलोचना करते हुए बताया है कि किस प्रकार मनुष्य का जीवन उपभोक्तावाद के जाल में फँसता जा रहा है और मानवीय संवेदनाएँ कमजोर पड़ रही हैं। वैश्वीकरण के प्रभाव से उपभोक्तावादी संस्कृति का विकास हुआ है। आधुनिक समाज में सफलता का मापदंड भौतिक संपत्ति और उपभोग की क्षमता बन गया है। हिंदी कविता में इस प्रवृत्ति की आलोचना करते हुए कवि बताते हैं कि उपभोक्तावाद ने मनुष्य को आत्मकेंद्रित बना दिया है और सामाजिक संबंध कमजोर होते जा रहे हैं।

वैश्वीकरण का एक महत्वपूर्ण प्रभाव सांस्कृतिक क्षेत्र में दिखाई देता है। पश्चिमी संस्कृति का प्रभाव बढ़ने से स्थानीय भाषाओं, परंपराओं और लोकसंस्कृति पर

संकट उत्पन्न हुआ है। हिंदी कविता इस संकट को गहराई से महसूस करती है और कई कवि अपनी रचनाओं में लोकजीवन और सांस्कृतिक मूल्यों को सुरक्षित रखने का प्रयास करते हैं। वैश्वीकरण के दौर में रोजगार और आर्थिक अवसरों की खोज में लोग गाँवों से शहरों की ओर तथा एक देश से दूसरे देश की ओर प्रवास कर रहे हैं। इससे विस्थापन की समस्या उत्पन्न हुई है। समकालीन हिंदी कविता में प्रवासी जीवन की पीड़ा, अकेलापन और सांस्कृतिक संघर्ष को गहराई से व्यक्त किया गया है–

"जब कोई एकान्त
मेरे होने और न होने के द्वन्द्व को सुलग जाता है
तग कीलें जोर-जोर से चुभने लगती हैं।
पहनाया गया मैं
दूसरे के मैले वस्त्र की तरह गन्धाने लगता है
और खून उछल-उछल कर
चाहता है उछाल देना कीलों को
और गला फाड़-फाड़ कर चिल्लाना
रास्तों पर गलियों में बाजारों में।"[6]

सूचना-प्रौद्योगिकी और डिजिटल माध्यमों के विस्तार ने जीवन की गति को तेज कर दिया है। इंटरनेट और सोशल मीडिया ने संचार के नए माध्यम उपलब्ध कराए हैं। समकालीन हिंदी कविता में इन तकनीकी परिवर्तनों का प्रभाव भी दिखाई देता है, जहाँ कवि आधुनिक जीवन की व्यस्तता और अकेलेपन को व्यक्त करते हैं–

"राजमार्ग-कोलाहल-पहिए
कांटेदार रंग गहरे
यंत्र सभ्यता चूस-चूस कर
फेंके गये असत चेहरे

यह अधनंगी शाम और
यह चुभता हुआ
अकेलापन
मैंने फिर घबराकर शीशा तोड़ दिया।"[7]

समकालीन हिंदी कविता में बाजारवाद, सामाजिक असमानता, पर्यावरण संकट, विस्थापन और सांस्कृतिक पहचान जैसे विषय प्रमुख रूप से दिखाई देते हैं।

"लाभ लाभ हिंसा लाभ।
लाभ से हिंसा, हिंसा से बाजार
शुभ लाभ के संचयन से हो हो बली।
बीच बाजार में ठोकता ताल अकेले-दुकेले नहीं,
वह कईयों का समूह बहुतों पर करता राज

भूख गरीबी को विश्व बाजार में
बेचता रुलाई और उदासी को को काला बाजार में।"[8]

समय के साथ-साथ समाज में विसंगतियों को कैसा जन्मा है। इन विसंगतियों ने आदमी-आदमी के बीच कैसे दरार डाल दिया है। आम आदमी इन्हीं विसंगतियों के दो पाटों के बीच पीसकर अपना जीवनयापन कर रहा है। कवि समाज में फैली विषमताओं के प्रति संवेदनशील दृष्टि प्रस्तुत करते हैं–

*"**खबरदार!***
उसने तुम्हारे परिवार को
नफरत के उस मुकाम पर लाकर खड़ा किया है
कि कल तुम्हारा सबसे छोटा लड़का भी
तुम्हारे पड़ोसी का गला
अचानक
अपने स्लेट से काट सकता है!
क्या मैंने गलत कहा?"[9]

21वीं सदी में सामाजिक मनोभाव में काफी बदलाव आया है। यह बदलाव मनुष्य की बाहरी दुनिया से संबंधित तो है ही साथ ही उसकी आंतरिक दुनिया से भी संबंधित है। बाहर और भीतर के इस तीव्र परिवर्तन में बहुत सी मान्यताएं परिवर्तित हुई हैं। परिवर्तन की इस प्रक्रिया में बहुत सी चुनौतियों का सामना भी करना पड़ा है। एक प्रकार से देखा जाए तो समाज की चुनौतियाँ ही साहित्य की चुनौतियाँ होती हैं। "कविता में जातीय काव्यात्मकता और कवि में जुझारू सामाजिकता की वापसी के बिना **21**वीं सदी में कविता शायद ही साँस ले पाए।" [10]वर्तमान समय में समाज, साहित्य और संस्कृति में आये दिन नयी-नयी चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है।

निष्कर्ष

अतः निष्कर्ष के तौर पर हम कह सकते हैं कि वैश्वीकरण ने हिंदी कविता के विषय, भाषा और दृष्टिकोण को प्रभावित किया है। समकालीन हिंदी कवियों ने बदलते समय की जटिलताओं को संवेदनशीलता के साथ अभिव्यक्त किया है। हिंदी कविता न केवल सामाजिक यथार्थ का दर्पण है बल्कि मानवीय मूल्यों और सांस्कृतिक अस्मिता की रक्षा का सशक्त माध्यम भी है।

संदर्भ सूची

1. रामचन्द्र शुक्ल, **भ्रमरगीत सार**, लोक भारती प्रकाशन, संस्करण 2008, पृ. सं. 73
2. वही, पृ. सं. 73
3. गजानन माधव मुक्तिबोध, **चाँद का मुँह टेढ़ा है**, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन नई दिल्ली, संस्करण 2015, पृ. सं. 65

4. शांता मुक्तिबोध, **मुक्तिबोध रचनावली भाग 5** (समाज और साहित्य), राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, संस्करण 2015, पृ. सं. 25
5. देवेन्द्र आर्य, **इक्कीसवीं सदी का आल्हा**, पृ. सं. 128
6. रामदरश मिश्र, **पक गयी है धूप**, भारतीय ज्ञानपीठ कलकत्ता, संस्करण 1969, पृ. सं. 4
7. कैलाश वाजपेयी, **संक्रांत**, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन नई दिल्ली, संस्करण 2003, पृ. सं. 30
8. सं. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, **समकालीन भारतीय साहित्य**, जुलाई–अगस्त 2011, पृ. 25
9. सुदामा पांडेय 'धूमिल', **संसद से सड़क तक**, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, संस्करण 2024, पृ. सं. 75
10. डॉ. शम्भुनाथ, **कविता का पुनर्निर्माण**, वर्तमान साहित्य शताब्दी अंक, मई–जून 2000